प्रकाशन के लिए अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

.....

एकलपीठः माननीय श्री मनीन्द्र मोहन श्रीवास्तव, न्यायमूर्ति

.....

रिट याचिका(227)क्र. 6728/2008

याचिकाकर्तागण अधीक्षण अभियंता सीएसईबी बिलासपुर खण्ड व अन्य

विरूद्ध

उत्तरदातागण जन उपयोगी स्थाई लोक अदालत, बिलासपुर व अन्य

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

तथा

रिट याचिका(227)क्र. 5470/2008

याचिकाकर्तागण छत्तीसगढ़ राज्य विद्युत बोर्ड व अन्य

विरूद्ध

उत्तरदातागण धन्नु यादव

आदेश

दिनाँक 13 अप्रैल 2011 को सूचीबद्ध

हस्ताक्षर

श्री मनीन्द्र मोहन श्रीवास्तव

न्यायमूर्ति

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

.....

एकलपीठः माननीय श्री मनीन्द्र मोहन श्रीवास्तव, न्यायमूर्ति

.....

रिट याचिका(227)क्र. 6728/2008

याचिकाकर्तागण अधीक्षण अभियंता सीएसईबी बिलासपुर खण्ड व अन्य

विरूद्ध

उत्तरदातागण जन उपयोगी स्थाई लोक अदालत, बिलासपुर व अन्य

.....

उपस्थितः

श्री अभिषेक सिन्हा, याचिकाकर्तागण हेतु अधिवक्ता

श्री गौतम खेत्रपाल, उत्तरदातागण क्र. 2 व 3 हेतु अधिवक्ता

WebCopy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

.....

तथा

रिट याचिका(227)क्र. 5470/2008

याचिकाकर्तागण छत्तीसगढ़ राज्य विद्युत बोर्ड व अन्य

विरूद्ध

उत्तरदाता धन्नु यादव

.....

उपस्थितः श्री अमियकांत तिवारी, याचिकाकर्तागण हेतु अधिवक्ता

श्री विजय के. देशमुख, उत्तरदाता हेतु अधिवक्ता

.....

आदेश

(दिनाँक 13/04/2011 को पारित)

1. उपरोक्त रिट याचिकाओं का निराकरण, इस सामान्य आदेश द्वारा, किया जा रहा है, क्योंकि इन याचिकाओं में विचाराणार्थ विधि का एक सामान प्रश्न उद्भुत होता है।

2. रिट याचिका (227) क्र. 5470/08 को जन उपयोगी स्थायी लोक अदालत, बिलासपुर द्वारा दिनाँक 27.8.2008 में पारित आदेश के विरुद्ध प्रस्तुत किया गया है । उत्तरदातागण क्र. 2 और 3 द्वारा स्थायी लोक अदालत (संक्षेप में "पी.एल.ए.") के समक्ष कु. माना उर्फ कुंती, जो कि उत्तरदातागण क्र. 2 और 3 की पुत्री थी, कि मृत्यु के लिए ₹2 लाख के प्रतिकर की माँग हेतु दिनांक 24.9.2007 को एक आवेदन प्रस्तुत किया गया था, जिसकी मृत्यु विद्युत के टूटे हुए तार के संपर्क में आने से हो गई थी जो मृतका कु. माना पर उस समय गिरा जब वह एक खुली नहर में स्नान कर रही थी। याचिकाकर्तागण द्वारा उत्तरदातागण क्र. 2 और 3 के दावों को अस्वीकार कर दिया गया था। पी.एल.ए. ने कई विवाद्यक विरचित किए। उनके एक विद्वान सदस्य के अनुग्रह पर, एक अतिरिक्त विवाद्यक विरचित किया गया कि *क्या पी.एल.ए. के पास विवाद का न्यायनिर्णयन करने का क्षेत्राधिकार है या नहीं*। लोक अदालत ने यह माना कि उसे विवाद का न्यायनिर्णयन करने और उत्तरदातागण क्र. 2 और 3 को उनकी बेटी की विद्युत के कारण हुई मृत्यु के लिए प्रतिकर देने का क्षेत्राधिकार प्राप्त है, क्योंकि दुर्घटना एक संस्थान द्वारा विद्युत की आपूर्ति के क्रम में हुई थी।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

3. याचिकाकर्तागण ने पूर्वोक्त रिट याचिका में पी.एल.ए. के उक्त आदेश को इस एकमात्र आधार पर चुनौती दी है कि पी.एल.ए. को विधि के अधीन इस प्रकृति के अपकृत्यिक दायित्व से संबंधित विवाद पर विचार करने का क्षेत्राधिकार नहीं था, क्योंकि यह विवाद किसी भी जन उपयोगी सेवा से उद्भूत नहीं है और यह ऐसा मामला नहीं है जहाँ विद्युत के उपभोक्ता ने सेवाओं से संबंधित या आपूर्ति से जुड़े किसी भी मामले के संबंध में उत्पन्न किसी भी विवाद के कारण किसी प्रतिकर का दावा किया हो अपितु यह एक दुर्घटना का मामला है, जिसके परिणामस्वरूप एक ऐसे व्यक्ति की मृत्यु हुई है जो सेवा के प्राप्तकर्ता या विद्युत के उपभोक्ता की क्षमता में नहीं था और उत्तरदातागण क्र. 2 और 3 के लिए प्रतिकर हेतु एकमात्र उपचार नियमित सिविल वाद प्रस्तुत करना है।

4. रिट याचिका (227) क्र. 5470/08 तत्कालीन विद्यमान छत्तीसगढ़ राज्य विद्युत मंडल द्वारा प्रस्तुत किया गया है, जो बिलासपुर स्थित पी.एल.ए. (स्थायी लोक अदालत) द्वारा दिनांक 14 जुलाई, 2008 को पारित एक आदेश से व्यथित है, जिसके द्वारा, विद्युत के झटके से अपने मवेशी की मृत्यु होने के कारण आवेदक को प्रतिकर प्रदान किया गया है। इस मामले में भी, आवेदक के मवेशी विद्युत के खंभे के संपर्क में आए और मवेशी की मृत्यु हो गई। आवेदक ने दिनांक 15.10.2006 को पी.एल.ए. के समक्ष एक आवेदन

प्रस्तुत किया, जिसमें याचिकाकर्ता के विरुद्ध ₹20,000/- के प्रतिकर की माँग की गई थी। आवेदक के दावे को अस्वीकार करते हुए, याचिकाकर्तागण ने इस याचिका में पी.एल.ए. के क्षेत्राधिकार के संबंध में एक विशिष्ट आपत्ति उठाई और पी.एल.ए. के समक्ष भी वैसी ही दलीलें प्रस्तुत कीं जो अन्य रिट याचिका में उठाई गई हैं। पी.एल.ए. ने क्षेत्राधिकार से संबंधित मुद्दे को याचिकाकर्तागण के विरुद्ध तय करते हुए यह माना कि चूंकि आवेदक के मवेशी विद्युत के खंभे के संपर्क में आने से मरे, इसलिए आवेदक प्रतिकर का हकदार है, क्योंकि दुर्घटना याचिकाकर्तागण की लापरवाही के कारण हुई और मवेशी की मृत्यु विद्युत आपूर्ति के संचालन के दौरान हुई।

5. दोनों रिट याचिकाओं में याचिकाकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता ने इस न्यायालय के निर्धारण हेतु एक महत्वपूर्ण प्रश्न उठाया है, और वह यह है कि- *"क्या विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 (जिसे इसके बाद "अधिनियम, 1987 " कहा गया है) की धारा-22 बी के तहत गठित पी.एल.ए. (स्थायी लोक अदालत) के पास अपकृत्यिक दायित्व पर आधारित प्रतिकर के ऐसे दावे पर विचार करने का क्षेत्राधिकार था, जो सेवा से असंबद्ध हैं?"* दोनों रिट याचिकाओं में याचिकाकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता ने यह प्रबल तर्क दिया कि अधिनियम, 1987 के अध्याय VI-ए में निहित सांविधिक योजना का आशय पी.एल.ए. को सिविल न्यायालय की तरह पूर्ण क्षेत्राधिकार प्रदान करना नहीं था, ताकि वह केवल इसलिए कि दुर्घटना अधिनियम, 1987 की धारा 22-ए(बी) के तहत परिभाषित लोक उपयोगी सेवाओं में लगे व्यक्ति की कथित लापरवाही का परिणाम थी, अपकृत्यिक दायित्व पर आधारित किसी भी प्रतिकर के दावे पर विचार कर सके, जब तक कि विवाद अनिवार्य रूप से दावेदार और सेवा प्रदाता के बीच की सेवा से संबंधित न हो। दूसरे शब्दों में, अधिनियम, 1987 की धारा-22-बी में निहित प्रावधानों का आशय पी.एल.ए. को, यद्यपि व्यापक विस्तार का, एक सीमित क्षेत्राधिकार केवल निर्दिष्ट लोक उपयोगी सेवा के संबंध में प्रदान करना था, अर्थात् सेवा प्रदाता और सेवा प्राप्तकर्ता के बीच उत्पन्न विवाद के मामले में, जो के सेवा विषय को छूता हो और उससे संबंधित हो, सुलह कार्यवाही संचालित करना तथा सुलह कार्यवाही की विफलता की स्थिति में न्यायनिर्णयन करना। दोनों रिट याचिकाओं में याचिकाकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया कि पी.एल.ए. के गठन के पीछे का उद्देश्य मुख्य रूप से पक्षकारों के बीच विवाद के सुलह और सौहार्दपूर्ण समझौते का प्रयास करना है, और जब तक दोनों पक्ष अपनी सहमति नहीं देते हैं, अधिनियम, 1987 की धारा 22-बी के तहत गठित पी.एल.ए. को, अधिनियम, 1987 की धारा 22-सी(8) के तहत प्रदत्त शक्ति की आड़ में विवाद का न्यायनिर्णयन करने का कोई क्षेत्राधिकार नहीं है। अपने प्रस्तुति को पुष्ट करने के लिए, याचिकाकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता ने माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय **युनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड वि. अजय सिन्हा और अन्य**[1], केरल उच्च न्यायालय के निर्णयों **मेसर्स न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड**

1 (2008) 7 SCC 454

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

वि. सभारथ्नम @ सभा रथिनम [2] और **भूपेश वि. मेसर्स न्यू इंडिया एश्योरेंस कं. लिमिटेड, टी.वी.पी.एम.**[3] में, तथा झारखंड उच्च न्यायालय के निर्णयों **ब्रांच मैनेजर, टाटा ए.आई.जी. जनरल इंश्योरेंस कं. लिमिटेड पूर्वी सिंहभूम और अन्य वि. श्रीमती बंदना देवी** [4] और **भारत संचार निगम लिमिटेड, रांची वि. छेदी राम गंजू और अन्य** [5] का अवलंब लिया है।

6. दूसरी ओर, दोनों मामलों में निजी उत्तरदातागण के विद्वान अधिवक्ता ने पी.एल.ए. द्वारा पारित आदेश का समर्थन किया। उन्होंने यह तर्क दिया कि पी.एल.ए. को व्यापक क्षेत्राधिकार प्रदान किया गया है और अधिनियम, 1987 के अधिनियमन के पीछे के उद्देश्य और प्रयोजन को देखते हुए, और विशेष रूप से विधिक सेवा प्राधिकरण (संशोधन) अधिनियम, 2002 (2002 का अधिनियम 37) द्वारा जोड़े गए नए शामिल अध्याय VI-ए के तहत मुकदमा-पूर्व सुलह और निपटान के उद्देश्य और प्रयोजन को देखते हुए, अधिनियम, 1987 की धारा 22-बी में निहित प्रावधान, जो लोक अदालत को क्षेत्राधिकार प्रदान करते हैं, व्यापकतम विस्तार में क्षेत्राधिकार प्रदान करते हैं।यह

क्षेत्राधिकार न केवल सभी प्रकार के विवादों में सुलह कार्यवाही संचालित करने के लिए है, बल्कि

समझौते की विफलता की स्थिति में, किसी भी अन्य प्रकृति के विवादों का न्यायनिर्णयन करने के लिए भी है,जिनमें अधिनियम, 1987 की धारा 22-ए(बी) के आशय के अनुसार जन उपयोगी सेवा का प्रदाता शामिल हो। उन्होंने यह प्रस्तुत किया कि अधिनियम, 1987 की धारा 22-बी में निहित प्रावधान की व्याख्या अधिनियम के उद्देश्य और प्रयोजन को आगे बढ़ाने के लिए उदारतापूर्वक की जानी चाहिए और इसलिए, यह आवश्यक नहीं है कि विवाद में अनिवार्य रूप से सेवा प्रदाता और सेवा प्राप्तकर्ता ही शामिल हों। उनका यह तर्क है कि पी.एल.ए. के पास ऐसे विवाद पर न्यायनिर्णयन करने का व्यापक क्षेत्राधिकार है, जहाँ अपकृत्य दायित्व पर आधारित दावा उठाया गया हो और जन उपयोगी सेवा के संचालन के कारण हुई किसी दुर्घटना के लिए प्रतिकर की माँग की गई हो। इस संबंध में उन्होंने **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड वि. विजय कुमार शर्मा और अन्य**[6] के मामले में दिए गए निर्णय और केरल उच्च न्यायालय के निर्णय **मेसर्स न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** (पुर्वोक्त) पर अवलंब लिया गया है।

7. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा किए गए विरोधी तर्कों पर विचार किया है और अभिलेखों का परिशीलन किया है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

2 WP(C) No. 30059/08 (C) decided on 11th Nov.2008
3 W.A. No.316/09 decided on 10.08.2009
4 W.A.(S) No.2557/08 decided on 25th February, 2010
5 W.P. (C) No.684/09 decided on 6th May, 2010
6 AIR 2008 Jhar.14, decided on 10.5.2007

8. यहाँ याचिकाओं के समूह में विनिश्चय हेतु जो विवाद्यक उद्भूत हुआ है, उसके लिए अधिनियम, 1987 की सांविधिक योजना, उस अधिनियम को अधिनियमित करने के पीछे के उद्देश्य और प्रयोजन, और विशेष रूप से संशोधन अधिनियम, अर्थात् विधिक सेवा प्राधिकरण (संशोधन) अधिनियम, 2002 (2002 का अधिनियम 37) द्वारा एक नए अध्याय VI-ए सम्मिलित करने के पीछे के उद्देश्य और प्रयोजन कि परीक्षा अपेक्षित है, जिसके तहत अधिनियम, 1987 की धारा 22-बी के अधीन स्थायी लोक अदालत की स्थापना उसके क्षेत्राधिकार का उपबंध किया गया है।

9. अधिनियम, 1987 की सांविधिक योजना और नए अंत:स्थापित अध्याय VI-ए, जो मुकदमा-पूर्व सुलह और समझौते का प्रावधान करता है, पर उच्चतम न्यायालय द्वारा **अजय सिन्हा**(पुर्वोक्त) के मामले में विचार किया गया था। अध्याय VI-ए में पी.एल.ए. की स्थापना और उसके
क्षेत्राधिकार से संबंधित उपबंधों का भी परीक्षण किया गया था। इस संबंध में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया है:

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

> "24. सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा-89, अन्य बातों के साथ-साथ,आपसी समझौते के माध्यम से विवादों के समाधान को बढ़ावा देने के लिए अधिनियमित की गई थी। अधिनियम का अध्याय VI-ए एक भिन्न उद्देश्य को प्राप्त करने का प्रयास करता है। यह न केवल सुलह के संबंध में सुलह की बात करता है, बल्कि विनिश्चय के संबंध में भी सुलह की बात करता है। स्थायी लोक अदालत का क्षेत्राधिकार, यद्यपि सीमित है, लेकिन वे व्यापक विस्तार के हैं। अधिनियम की धारा 22-सी(1) में संलग्न दो परंतुक स्थायी लोक अदालत के क्षेत्राधिकार को निम्नलिखित रूप में संक्षिप्त करते हैं:
>
> > "परंतु यह कि स्थायी लोक अदालत को किसी भी विधि के अधीन शमनीय न होने वाले किसी अपराध से संबंधित किसी विषय की बाबत अधिकारिता नहीं होगी:
> >
> > "परंतु यह और कि स्थायी लोक अदालत को उस मामले में भी क्षेत्राधिकार नहीं होगा जहाँ विवादित संपत्ति का मूल्य दस लाख रुपये से अधिक हो।"

25. अध्याय VI-ए स्वतंत्र रूप से विद्यमान है। जहाँ एक ओर अध्याय का शीर्षक मुकदमा-पूर्व, सुलह और समझौते की बात करता है, वहीं अधिनियम की धारा 22-सी(8) निर्धारण की बात करती है। यह एक और न्यायनिर्णायक प्राधिकरण का निर्माण करता है, जिसका निर्णय एक विधिक कल्पना द्वारा एक सिविल न्यायालय का निर्णय होगा। इसे एक मामले का निर्णय करने का अधिकार है।"निर्णय" शब्द का अर्थ है तय करना; एक निश्चित राय बनाना;निर्णय सुनाना। (देखें *एडवांस्ड लॉ लेक्सिकॉन, तीसरा संस्करण, 2005*, पृष्ठ 1253)। स्थायी लोक अदालत द्वारा दिया गया कोई भी अधिनिर्णय डिक्री की तरह निष्पादन योग्य होता है। इसके विरुद्ध कोई अपील नहीं की जाएगी। स्थायी लोक अदालत का निर्णय अंतिम और पक्षकारों पर बाध्यकारी होता है। जहाँ एक ओर, संसदीय आशय को ध्यान में रखते हुए, बातचीत, सुलह, मध्यस्थता, लोक अदालत और न्यायिक निपटान के माध्यम से सभी विवादों के निपटारे को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है, वहीं यह भी समान रूप से सुस्थापित है कि जहाँ किसी न्यायालय के क्षेत्राधिकार को छीना जा रहा हो,वहाँ सांविधिक प्रावधानों का सख्त अर्थान्वयन किया जाना चाहिए। इस प्रकार एक संतुलन स्थापित करने की आवश्यकता है। न्यायालय को एक संविधि के अधीन बनाया जा सकता है। इसके लिए उसके पास आवश्यक बुनियादी ढाँचा होना चाहिए। ऐसे प्रावधान के अर्थान्वयन के लिए न्यायाधिकरण की स्वतंत्रता और निष्पक्षता को मानवाधिकार का एक हिस्सा होने के कारण विचार में लिया जाना आवश्यक है। जब एक न्यायालय बनाया जाता है, तो पदधारियों को वाद का निर्धारण करने के लिए पात्र होना चाहिए।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

26. किसी भी विवादित पक्ष को एक विकल्प दिया जाता है। यह एक लोक उपयोगी सेवा प्रदाता या एक लोक उपयोगी सेवा प्राप्तकर्ता हो सकता है। सेवा का लोक उपयोगिता से कुछ संबंध होना चाहिए। सामान्य तौर पर, बीमा सेवा लोक उपयोगी सेवा के अंतर्गत नहीं आएगी। लेकिन सांविधिक योजना को ध्यान में रखते हुए, इसे उसके अंतर्गत शामिल माना जाना चाहिए। यह कहना एक बात है कि अधिनियम के अंतर्गत वैकल्पिक विवाद समाधान तंत्र के माध्यम से समझौता कराने के लिए एक अधिकरण बनाया गया है, लेकिन यह कहना दूसरी बात है कि उस पर न्यायनिर्णायक शक्ति प्रदात्त की गई है। इसलिए हमारी राय में, अध्याय VI-A की

सूक्ष्म जाँच अपेक्षित है। इस प्रकृति के मामले में, जाँच का स्तर भी उच्च होना चाहिए। [देखें *अनुज गर्ग वि. होटल एसोसिएशन ऑफ इंडिया* (2008) 3 एससीसी 1]।

27. धारा 22-सी की उप-धारा (1) विवादों के निपटारे की बात करती है। अधिकरण को सुलह तंत्र का सहारा लेना होता है। सुलह कार्यवाही का एक आवश्यक तत्व यह है कि किसी को भी उसमें भाग लेने के लिए बाध्य नहीं किया जाएगा। यह प्रकृति में स्वैच्छिक होनी चाहिए। यह कार्यवाही मान्यता प्राप्त वैकल्पिक विवाद समाधान (एडीआर) तंत्र में से एक के समान है, जो मध्यस्थता से बना है। इसे सुलह और मध्यस्थता के बराबर माना जा सकता है। ऐसे मामले में, पक्षकार बातचीत, सुलह या मध्यस्थता द्वारा विवाद के निपटारे के लिए सहमति करते हैं । अपनाई गई कार्यवाही बाध्यकारी नहीं होती हैं, जबकि मध्यस्थता एक बाध्यकारी प्रक्रिया है। मध्यस्थता के संबंध में भी, एक अधिनिर्णय चुनौती का विषय हो सकता है। मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 के प्रावधान उस पर भी लागू होंगे। मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 34 के संदर्भ में क्षेत्राधिकार व्यापक है। न्यायालय उक्त क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए मामले के गुण-दोष में प्रवेश नहीं कर सकता है, लेकिन यह विचार करने का हकदार होगा कि क्या मध्यस्थ कदाचार का दोषी था। यदि वह पक्षपाती पाया जाता है, तो उसका अधिनिर्णय अपास्त कर दिया जाएगा। सुलह तंत्र के माध्यम से स्वैच्छिक समझौते की विषय क्षेत्र भी सीमित है। यदि ऐसे मामले में पक्षकार मुख्य मुद्दों के संबंध में समझौता करने के लिए सहमत हो सकते हैं, तो उस पर कोई अपवाद नहीं लिया जा सकता है, क्योंकि पक्षकारों को उस मंच के आत्म-निर्धारण का अधिकार है, जो उन्हें विवाद को हल करने में मदद करेगा, लेकिन जब पक्षकारों के बीच कुछ औपचारिक मतभेदों की बात आती है, तो वे मामले को सुलहकर्ता के क्षेत्राधिकार पर छोड़ सकते हैं। सुलहकर्ता कार्यवाही के अंतिम चरण में ही मध्यस्थ की भूमिका अपनाएगा।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

28. हालाँकि, यहाँ स्थायी लोक अदालत केवल एक मध्यस्थ की भूमिका नहीं अपनाते, जिनका अधिनिर्णय चुनौती की विषय-वस्तु हो सकता है, बल्कि यह एक न्यायनिर्णायक की भूमिका भी निभाते हैं। संसद ने स्थायी लोक अदालत को मामले का निर्णय करने का अधिकार दिया है। इनकी एक न्यायनिर्णायक भूमिका है।

39. ध्यान देने योग्य महत्वपूर्ण बात यह है कि लोक उपयोगी सेवाओं के संबंध में, धारा 22-सी(8) के पीछे मुख्य उद्देश्य यह प्रतीत होता है कि "अधिकांश छोटे मामले जो नियमित अदालतों में नहीं जाने चाहिए, उनका निपटारा मुकदमेबाजी-पूर्व चरण में ही हो जाएगा।"

41. हमें किसी भी संविधि के ऐसे अर्थान्वयन से सावधान रहना चाहिए जो अधिनियम की धारा 22-सी की उप-धारा (8) के संबद्ध स्थायी लोक अदालत को इतनी व्यापक शक्ति प्रदान करे। स्थायी लोक अदालत को प्रारंभ में ही प्रश्नों को सूत्रबद्ध करने होंगे। हालाँकि, हम, वर्तमान में दिए गए परामर्श के अनुसार, ऐसा कोई कानून निर्धारित नहीं करना चाहते कि स्थायी लोक अदालत ऐसे मामलों पर विचार करने के लिए अपने क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने से इनकार कर देगी , लेकिन हम इस बात पर जोर देते हैं कि इसे अपनी शक्ति का प्रयोग उचित देखभाल और सावधानी के साथ करना चाहिए। इसे विवाद के किसी भी पक्षकार को यह प्रभाव नहीं देना चाहिए कि वह सांविधिक प्रावधानों और उनके अधीन लगाए गए प्रतिबंधों की जाँच किए बिना, अपने क्षेत्राधिकार के संबंध में, शुरू से ही एक न्यायनिर्णयाक भूमिका निभाने वाला है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

10. धारा 22-बी स्थायी लोक अदालतों की स्थापना का प्रावधान करती है और वर्तमान मामले के लिए प्रासंगिक होने के कारण इसे नीचे उद्धृत किया गया है:

"22-B. स्थायी लोक अदालतों की स्थापना-

(1)धारा-19 में किसी बात के होते हुए भी, केन्द्रीय प्राधिकरण या, यथास्थिति, प्रत्येक राज्य प्राधिकरण, अधिसूचना द्वारा, ऐसे स्थानों पर और एक या अधिक लोक उपयोगी सेवाओं के संबंध में तथा ऐसे क्षेत्रों के लिए, जो अधिसूचना में विनिर्दिष्ट किए जाएँ, स्थायी लोक अदालतों की स्थापना करेगा।

(2) xxx"

उपरोक्त प्रावधान के अवलोकन से यह ज्ञात होता है कि केन्द्रीय प्राधिकरण या राज्य प्राधिकरण की अधिसूचना द्वारा गठित पी.एल.ए. की स्थापना ऐसे स्थानों पर और एक या अधिक लोक उपयोगी सेवाओं के संबंध में तथा ऐसे क्षेत्रों के लिए, जो अधिसूचना में विनिर्दिष्ट किए जाएँ,क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने के लिए की जा सकती है। इस प्रकार, स्थायी लोक अदालतें उन एक अथवा अधिक लोक उपयोगी सेवाओं के संबंध में क्षेत्राधिकार का प्रयोग कर सकती हैं, जो अधिसूचना में विनिर्दिष्ट हों। इस

न्यायालय के समक्ष इस तथ्य पर विवाद नहीं किया गया है कि दिनाँक 11 जनवरी, 2007 की अधिसूचना के अंतर्गत, छत्तीसगढ़ विधिक सेवा प्राधिकरण ने अधिनियम, 1987 की धारा 22-बी की उप-धारा (2) द्वारा प्रदत्त शक्ति का प्रयोग करते हुए, विनिर्दिष्ट स्थानों पर और विनिर्दिष्ट क्षेत्र के लिए तथा अधिनियम, 1987 की धारा 22-ए में विनिर्दिष्ट लोक उपयोगी सेवाओं के संबंध में स्थायी लोक अदालतों की स्थापना की है। इसलिए, अधि., 1987 की धारा 22-बी में निहित प्रावधान के आधार पर, दिनांक 11 जनवरी, 2007 की अधिसूचना द्वारा स्थापित स्थायी लोक अदालतें अधिनियम, 1987 की धारा 22-ए(बी) के आशय की सभी लोक उपयोगी सेवाओं के संबंध में क्षेत्राधिकार का प्रयोग कर सकती थीं। लोक उपयोगी स्थायी लोक अदालत का क्षेत्राधिकार अनिवार्य रूप से विनिर्दिष्ट लोक उपयोगी सेवाओं के संबंध में होता है।

11. अधि.,1987 की धारा 22-बी के तहत गठित और स्थापित स्थायी लोक अदालतें सिविल न्यायालयों की तरह पूर्ण क्षेत्राधिकार या सामान्य क्षेत्राधिकार के न्यायालय नहीं हैं, किंतु ऐसी स्थायी लोक अदालतें एक या अधिक लोक उपयोगी सेवाओं के संबंध में क्षेत्राधिकार का प्रयोग करती हैं। "*एक या अधिक लोक उपयोगी सेवाओं के संबंध में ऐसे क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने*" को अधिनियमित करने के पीछे विधायिका के आशय को मुख्य रूप से उद्देश्यों और कारणों की पृष्ठभूमि में स्वयं अधिनियम की भाषा से समझा जाना चाहिए। विधिक सेवा प्राधिकरण (संशोधन)विधेयक,2002 में निहित संशोधन अधि. क्र. 36, 2002 द्वारा एक बिल्कुल नया अध्याय VI-ए (धारा 22-ए, 22बी, 22सी, 22डी और 22ई) को शामिल करने के पीछे उद्देश्यों और कारणों का विवरण निम्नलिखित है:

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

> "1. विधिक सेवा प्राधिकरण अधि., 1987 को समाज के कमजोर वर्गों को निःशुल्क तथा सक्षम विधिक सेवाएँ प्रदान करने के लिए विधिक सेवा प्राधिकरणों के गठन हेतु अधिनियमित किया गया था, ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि आर्थिक या अन्य अक्षमताओं के कारण किसी भी नागरिक को न्याय प्राप्त करने के अवसर से वंचित न किया जाए और यह सुनिश्चित करने के लिए लोक अदालतों का आयोजन करना कि विधिक प्रणाली का संचालन समान अवसर के आधार पर न्याय को बढ़ावा दें। लोक अदालत की प्रणाली, जो विवाद समाधान के लिए वैकल्पिक अभिनव तंत्र है, न्यायालयों के बाहर सुलह की भावना में विवादों को हल करने में प्रभावी प्रमाणित हुई है।
>
> 2. हालांकि, उक्त अधिनियम के अध्याय VI के तहत लोक अदालतों के संगठन की मौजूदा योजना में प्रमुख कमी यह है कि लोक अदालतों की प्रणाली मुख्य रूप से पक्षकारों के बीच समझौते या निपटान पर आधारित है। यदि पक्षकार किसी समझौते या निपटान पर नहीं पहुँचते हैं, तो मामला या तो न्यायालय को वापस भेज दिया जाता है या पक्षकारों को न्यायालय में उपचार खोजने की सलाह दी जाती है। इससे न्याय के वितरण

में अनावश्यक विलंब होता है। यदि पक्षकारों के किसी समझौते या निपटान पर पहुँचने में विफल रहने की स्थिति में लोक अदालतों को गुण-दोष के आधार पर मामलों का निर्णय करने की शक्ति दी जाती है, तो इस समस्या का काफी हद तक समाधान किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, वे मामले, जो लोक उपयोगी सेवाओं के, जैसे कि महानगर टेलीफोन निगम लिमिटेड, दिल्ली विद्युत बोर्ड, आदि के संबंध में उत्पन्न होते हैं, उनका तत्काल निराकरण किया जाना आवश्यक है, ताकि लोगों को मुकदमेबाजी-पूर्व चरण में भी बिना किसी विलंब के न्याय मिल सके और इस प्रकार अधिकांश छोटे मामले जो नियमित न्यायालयों में नहीं जाने चाहिए, उनका निराकरण मुकदमेबाजी-पूर्व चरण में ही हो जाएगा, जिसके परिणामस्वरूप नियमित न्यायालयों के कार्यभार में बड़ी कमी आएगी। इसलिए, विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 में संशोधन करने का प्रस्ताव है, ताकि स्थायी लोक अदालतों की स्थापना की जा सके, जो लोक उपयोगी सेवाओं से संबंधित मामलों के लिए सुलह और समझौते हेतु अनिवार्य मुकदमेबाजी-पूर्व तंत्र प्रदान करें।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

12. संशोधन के माध्यम से प्रस्तावित विधान की मुख्य विशेषताओं में से एक यह बताई गई है:

"3. प्रस्तावित विधान की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं:

(I) x x x

(ii) स्थायी लोक अदालत एक या अधिक लोक उपयोगी सेवाओं के संबंध में क्षेत्राधिकार का प्रयोग करेगी, जैसे: वायु, सड़क और जल द्वारा यात्रियों या माल की परिवहन सेवाएँ, डाक, तार या टेलीफोन सेवाएँ, किसी भी संस्थान द्वारा जनता को विद्युत, प्रकाश या पानी की आपूर्ति, सार्वजनिक स्वच्छता संरक्षण, अस्पतालों या औषधालयों में सेवाएँ, और बीमा सेवाएँ।"

13. यह सुस्थापित है कि किसी विधेयक के साथ संलग्न उद्देश्यों और कारणों के विवरण का उपयोग, जैसा कि माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **अश्विनी कुमार घोष और अन्य वि. अरबिंद बोस और अन्य**[7], **पश्चिम बंगाल राज्य वि. भारत संघ**[8] और निर्णयों की एक श्रृंखला में अभिनिर्धारित किया गया है, केवल सीमित उद्देश्यों के लिए किया जा सकता है, अर्थात् विधान के लिए अग्रणी पृष्ठभूमि और पूर्ववृत्त, मामलों की स्थिति को समझने के लिए, केवल सीमित उद्देश्यों के लिए किया जा सकता है। अर्थान्वयन की

7 AIR 1952 SC 369
8 AIR 1963 SC 1241

प्रक्रिया में उद्देश्यों और कारणों के विवरण के उपयोग को संक्षेप में बताते हुए, **भाईजी वि. उप-विभागीय अधिकारी, थांदला**[9] के मामले में, उच्चतम न्यायालय ने यह निर्धारित किया कि पृष्ठभूमि को समझने के लिए, मामलों की स्थिति, संविधि के संबंध में आसपास की परिस्थितियों और उस कमी को समझने के लिए जिसे संविधि दूर करना चाहती थी, उद्देश्यों और कारणों के विवरण का संदर्भ लेना अनुमत है।

धारा 22ए से 22ई तक समाहित अध्याय VI ए को शामिल करने के पीछे उद्देश्यों और कारणों का विवरण यह प्रकट करता है कि स्थायी लोक अदालतों की स्थापना की नई योजना इसलिए शुरू की गई थी ताकि समझौते की विफलता की स्थिति में लोक अदालतों को गुण-दोष के आधार पर मामलों का निर्णय करने की शक्ति दी जा सके। इसके अतिरिक्त, उद्देश्यों और कारणों के विवरण में यह कहा गया है कि लोक उपयोगी सेवा के संबंध में उत्पन्न होने वाले मामलों को तत्काल निराकरण की आवश्यकता है ताकि लोगों को मुकदमेबाजी-पूर्व चरण में भी बिना विलंब के न्याय मिल सके और इस प्रकार अधिकांश छोटे मामले जो नियमित न्यायालयों में नहीं जाने चाहिए, उनका निपटारा मुकदमेबाजी-पूर्व चरण में ही हो जाएगा, जिसके परिणामस्वरूप नियमित न्यायालयों के कार्यभार में बड़ी कमी आएगी, और इसलिए, लोक उपयोगी सेवाओं से संबंधित मामलों के अनिवार्य मुकदमेबाजी-पूर्व सुलह और समझौता तंत्र प्रदान करने के लिए स्थायी लोक अदालतों की स्थापना हेतु अधिनियम, 1987 में संशोधन करने का प्रस्ताव किया गया था। प्रस्तावित विधान, जो अधि., 1987 को संशोधित करने की मांग करता है, उसके उद्देश्यों और कारणों के विवरण की प्रमुख विशेषताओं से संबंधित खंड 3 (ii) में यह पुनरावृत्त किया गया था कि पी.एल.ए. एक या एक से अधिक लोक उपयोगी सेवाओं के संबंध में क्षेत्राधिकार का प्रयोग करेगा, जैसे कि, वायु, सड़क और जल द्वारा यात्रियों या माल की परिवहन सेवाएँ, डाक, तार या टेलीफोन सेवाएँ, किसी संस्थान द्वारा जनता को विद्युत, प्रकाश या पानी की आपूर्ति, सार्वजनिक स्वच्छता संरक्षण, अस्पतालों और औषधालयों की सेवाएँ और बीमा सेवाएँ।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

पूर्वोक्त विधान की पृष्ठभूमि में, धारा 22बी में निहित प्रावधान की व्याख्या किए जाने की आवश्यकता है। यह व्याख्या का एक मूलभूत और सुस्थापित नियम है कि विधायिका का आशय मुख्य रूप से प्रयुक्त भाषा से प्राप्त किया जाता है, जैसा कि उच्चतम न्यायालय द्वारा **ग्वालियर रेयन सिल्क मेन्यू. (विविंग) कंपनी लिमिटेड वि. कस्टोडियन ऑफ वेस्टेड फॉरेस्ट्स**[10] के मामले में अभिनिर्धारित किया गया है। शाब्दिक अर्थान्वयन का नियम यह अपेक्षा करता है कि किसी संविधि के शब्दों को पहले उनके प्राकृतिक सामान्य या प्रचलित अर्थ में समझा जाए और वाक्यांशों तथा

9 (2003) 1 SCC 692
10 AIR 1990 SC 1747

वाक्यों की व्याख्या उनके व्याकरणिक अर्थ के अनुसार की जाए, जब तक कि वह किसी असंगति की ओर न ले जाए या जब तक संदर्भ में, या संविधि के उद्देश्य में, इसके विपरीत सुझाव देने वाली कोई बात न हो (कृपया **राजस्थान राज्य वि. बाबू राम [(2007) 6 एससीसी 55]** देखें)।

14. अधिनियम, 1987 की धारा 22-बी एक गैर-बाधाकारी खंड के साथ शुरू होती है, जिसका अधिनियम की धारा 19 में निहित प्रावधान पर अध्यारोही प्रभाव होता है। यह ऐसे स्थानों पर और एक या अधिक लोक उपयोगी सेवाओं के संबंध में तथा ऐसे क्षेत्र के लिए, जो अधिसूचना में विनिर्दिष्ट किया जाए, स्थायी लोक अदालतों की स्थापना और उनके ऐसे क्षेत्राधिकार के प्रयोग की बात करता है। अभिव्यक्ति "एक या एक से अधिक लोक उपयोगी सेवाओं के संबंध में ऐसे क्षेत्राधिकार के प्रयोग के लिए" स्पष्ट रूप से कानून की भावना को दर्शाती है कि स्थायी लोक अदालतों की स्थापना एक या अधिक लोक उपयोगी सेवाओं के संबंध में क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने के लिए की जानी है। उक्त अभिव्यक्ति पी.एल.ए. के क्षेत्राधिकार को लोक उपयोगी सेवाओं के संबंध में सीमित करती है, जैसा कि अधिनियम, 1987 की धारा 22-ए(बी) में गिनाया गया है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

15. "के संबंध में" शब्दों का प्रयोग विधायी आशय को स्पष्ट करता है कि पी.एल.ए. एक या अधिक लोक उपयोगी सेवाओं से संबंधित क्षेत्राधिकार का प्रयोग करेगा । **तोलाराम रेलूमल और अन्य वि. बॉम्बे राज्य**[11] के मामले में, बॉम्बे रेंट्स, होटल और लॉजिंग हाउस रेट्स (कंट्रोल) अधि, 1947 की धारा 18 में प्रयुक्त शब्दों "के संबंध में" की व्याख्या करते हुए, इसका अर्थ यह निकाला गया कि यह कुछ ऐसा है जो "के संदर्भ में" शब्दों से संबंधित है।

यूनियन ऑफ इंडिया और अन्य वि. विजय चंद जैन[12] के मामले में, उच्चतम न्यायालय ने माना कि "के संबंध में" शब्द धारा 23-(1बी) के संदर्भ में व्यापक अर्थ को ग्रहण करते हैं, अभिव्यक्ति का अर्थ है 'से जुड़ा होना'। यह ध्यान में रखते हुए कि धारा-22बी स्थायी लोक अदालतों की स्थापना से संबंधित है और पी.एल.ए. के क्षेत्राधिकार को परिभाषित करने का प्रयास

करती है, "एक या एक से अधिक लोक उपयोगी सेवाओं" से पहले आने वाले "के संबंध में" शब्दों का न्यायसंगत, तार्किक और निष्पक्ष अर्थान्वयन करने से यह निकलता है कि लोक अदालतों की स्थापना जन उपयोगी सेवाओं *से संबंधित या उसके संदर्भ में या उससे जुड़े* विवादों के संबंध में क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने के लिए की गई है। इसलिए, विधायी आशय पी.एल.ए. को सीमित

---

11 AIR 1954 SC 469
12 (1977) 2 SCC 405

क्षेत्राधिकार प्रदान करने का है, न कि नियमित न्यायालय की तरह पूर्ण क्षेत्राधिकार। **अजय सिन्हा**(पूर्वोक्त) के मामले में भी, उच्चतम न्यायालय ने अध्याय VI-ए की वैधानिक योजना के अंतर्गत पी.एल.ए. के क्षेत्राधिकार की प्रकृति, दायरे और सीमा पर विचार करते हुए कहा कि न्यायालय को अधिनियम की धारा 22-सी की उप-धारा (8) को ध्यान में रखते हुए, ऐसे अधिनियम के अर्थान्वयन से सावधान रहना चाहिए जो पी.एल.ए. को इतनी व्यापक शक्ति प्रदान करे।

16. अधिनियम, 1987 की धारा 22-बी में समाहित अभिव्यक्ति "लोक उपयोगी सेवाएँ" का, जिस संदर्भ में इसका उपयोग किया गया है, उसके प्राकृतिक, स्पष्ट और व्याकरणिक अर्थ के आधार पर, यह निष्कर्ष निकलता है कि पी.एल.ए. के पास उन सेवाओं से जुड़े विवादों के संबंध में क्षेत्राधिकार है, जो अधिनियम, 1987 की धारा 22ए(बी) में प्रगणित जन उपयोगी सेवाओं की श्रेणी में आते हैं। अभिव्यक्ति "लोक उपयोगी सेवाएँ" में, शब्द "लोक उपयोगी" शब्द "सेवा" को विशेषित करता है। इसलिए, पी.एल.ए. का क्षेत्राधिकार अनिवार्य रूप से सेवा से संबंधित है, जो सेवा प्रदाता और सेवा प्राप्तकर्ता के बीच एक विवाद के अस्तित्व को पूर्व-मान्यता देता है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

17. यदि धारा 22-बी में निहित प्रावधानों की व्याख्या इस प्रकार से की जाए कि पी.एल.ए. को विवादों से निपटने और उनका न्यायनिर्णयन करने का व्यापक क्षेत्राधिकार प्रदान करते हैं, भले ही वे सेवा से संबंधित या उससे जुड़े न हों, केवल इसलिए कि विवाद के पक्षकारों में से एक पक्ष लोक उपयोगी सेवा प्रदान करने वाला एक संस्थान है, तो अधिनियम 1987 की धारा-22बी में प्रयुक्त शब्द "सेवा" अनावश्यक हो जाएगा और यह कहा जा सकता है कि वह अप्रयोज्य हो जाएगा। **अश्विनी कुमार घोष** (पूर्वोक्त) के मामले में, शब्दों की अस्वीकृति से बचने के नियम की व्याख्या करते हुए, यह निम्नलिखित रूप में अभिनिर्धारित किया गया था:

> "26....यह अर्थान्वयन का अच्छा सिद्धांत नहीं है कि किसी संविधि में शब्दों को अनुपयुक्त अतिरेक मानकर खारिज कर दिया जाए, यदि वे उनका उचित प्रयोग उन परिस्थितियों में हो सकता है जो संविधि की सीमा में आती हों।"

जे.के. कॉटन स्पिनिंग एंड वीविंग मिल्स कंपनी लिमिटेड वि. उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य[13] के मामले में, उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित रूप में माना था:

> "(7)... संविधि के निर्वाचन में न्यायालय हमेशा यह मानते हैं कि विधायिका ने उसका प्रत्येक भाग किसी उद्देश्य के लिए डाला है और विधायी आशय यह है कि संविधि के प्रत्येक भाग का प्रभाव होना चाहिए।"

उपरोक्त सिद्धांतों को **घनश्यामदास वि. क्षेत्रीय सहायक वाणिज्यिक कर आयुक्त, नागपुर और अन्य**[14] के मामले में निम्नलिखित शब्दों में पुनः दोहराया गया था:

> "ऐसा अर्थान्वयन जो विधायिका के लिए अतिरेकता का कारण बने, बाध्यकारी कारणों को छोड़कर, स्वीकार नहीं किया जाएगा।"

इसके अतिरिक्त, **यूनियन ऑफ इंडिया और अन्य वि. हंसोली देवी और अन्य**[15] के मामले में, उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित रूप में माना था:

> "9. इससे पहले कि हम इस बात की जाँच शुरू करें कि धारा 28-ए की सही व्याख्या क्या होगी, हम किसी अधिनियम के अर्थान्वयन के कुछ मूल सिद्धांतोंको ध्यान में रखना उचित समझते हैं। टिन्डल, सी.जे. द्वारा *ससेक्स पीयरेज मामले*[8] में दिया गया नियम अभी भी मान्य है। उक्त नियम का प्रभाव इस प्रकार है: (ई.आर. पृष्ठ 1057)
>
> > "यदि संविधि के शब्द स्वयं में सटीक और स्पष्ट हैं, तो उन शब्दों को उनके प्राकृतिक और सामान्य अर्थ में स्पष्ट करने के अलावा और कुछ भी आवश्यक नहीं हो सकता है। ऐसे मामले में, शब्द स्वयं ही कानून बनाने वाले के इरादे को सबसे अच्छी तरह व्यक्त करते हैं।"
>
> किसी संविधि के निर्माण का यह एक प्रधान सिद्धांत है कि जब अधिनियम की भाषा स्पष्ट और असंदिग्ध हो, तो न्यायालय को संविधि में प्रयुक्त शब्दों को प्रभाव देना चाहिए और न्यायालयों के लिए इस आधार पर एक काल्पनिक निर्माण अपनाना उचित नहीं होगा कि ऐसा निर्माण अधिनियम के कथित उद्देश्य और नीति के साथ अधिक सुसंगत है....
>
> .....

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

---

13 AIR 1961 SC 1170
14 AIR 1964 SC 766
15 (2002) 7 SCC 273

> इसमें कोई संदेह नहीं है कि यदि किसी संविधि की भाषा के सादे अर्थ की जाँच करने पर वह असंगति, अन्याय और अर्थहीनता की ओर ले जाता है, तो न्यायालय उस उद्देश्य पर विचार कर सकता है जिसके लिए संविधि को लाया गया है और एक ऐसा अर्थ देने का प्रयास करेगा जो अधिनियम के उद्देश्य के अनुरूप हो। माननीय मुख्य न्यायमूर्ति पतंजलि शास्त्रीजी ने *अश्विनी कुमार घोष वि. अरबिंद बोस* के मामले में यह माना था कि यह अर्थान्वयन का ठोस सिद्धांत नहीं है कि किसी संविधि में शब्दों को अनुपयुक्त अतिरेक मानकर खारिज कर दिया जाए, यदि उनका उचित अनुप्रयोग संभव हो उन परिस्थितियों में जो संविधि की विचारणीय प्रस्तुती के भीतर आती हों। *क्यूबेक रेलवे, लाइट हीट एंड पावर कंपनी लिमिटेड वि. वैंड्री* के मामले में यह अवलोकन किया गया था कि विधायिका से यह अपेक्षित है कि वह अपने शब्दों को व्यर्थ न करे या निरर्थक कुछ भी न कहे और ऐसा अर्थान्वयन जो विधायिका के लिए अतिरेकता का कारण बने, केवल बाध्यकारी कारणों को छोड़कर, स्वीकार नहीं किया जाएगा।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

18. वर्तमान मामले में, विधान के उद्देश्य और उस संदर्भ पर विचार करते हुए, जिसमें पी.एल.ए. को क्षेत्राधिकार प्रदान किया गया है, शब्द "सेवा" को अनावश्यक मानने का कोई बाध्यकारी कारण नहीं है।

19. अतः, अधिनियम, 1987 की धारा 22बी के तहत गठित पी.एल.ए. के समक्ष सुलह तथा विफलता की स्थिति में, न्यायनिर्णयन के लिए लाए जा सकने वाले विवाद अनिवार्य रूप से लोक उपयोगी सेवा से जुड़े सेवा प्रदाता और सेवा प्राप्तकर्ता के बीच के विवाद हैं। **अजय सिन्हा** (पूर्वोक्त) के मामले में, उच्चतम न्यायालय ने अधिनियम, 1987 के अध्याय VI-ए की सांविधिक योजना की जाँच करते हुए, पी.एल.ए. द्वारा निराकृत किए जाने वाले विवाद की प्रकृति को निम्नलिखित शब्दों में भी चिन्हित किया था:

> "26. किसी विवाद के किसी भी पक्ष को एक विकल्प दिया जाता है। यह एक लोक उपयोगी सेवा प्रदाता या एक लोक उपयोगी सेवा प्राप्तकर्ता हो सकता है। सेवा का लोक उपयोगी से कुछ संबंध होना चाहिए। सामान्य तौर पर, बीमा सेवा लोक उपयोगी सेवा के अंतर्गत नहीं आएगी। लेकिन सांविधिक योजना को ध्यान में रखते हुए, इसे उसके तहत शामिल माना जाना चाहिए। यह कहना एक बात है कि एक संविधि के अंतर्गत वैकल्पिक विवाद समाधान तंत्र के माध्यम से एक समझौता कराने

> के लिए एक प्राधिकरण बनाया गया है, लेकिन यह कहना दूसरी बात है कि उस पर एक न्यायनिर्णायक शक्ति प्रदान की गई है। इसलिए, हमारी राय में, अध्याय VI-A को गहन जाँच की आवश्यकता है। इस प्रकृति के मामले में, जाँच का स्तर भी उच्च होना चाहिए। (देखें *अनुज गर्ग वि. होटल एसोसिएशन ऑफ इंडिया*)।"

20. उपरोक्त चर्चाओं का परिणाम यह है कि स्थायी लोक अदालतें लोक उपयोगी सेवा से संबंधित सेवाओं से उत्पन्न होने वाले विवादों के मामले में ही क्षेत्राधिकार का प्रयोग कर सकती हैं और उनके पास अपकृत्य दायित्व पर आधारित दावे से संबंधित विवादों का न्यायनिर्णयन करने का कोई पूर्ण क्षेत्राधिकार नहीं है, केवल इसलिए कि विवाद के पक्षकारों में से एक वह है जो एक लोक उपयोगी सेवा के संचालन में संलग्न है।

21. दोनों रिट याचिकाओं में, विद्युत के झटके के कारण हुई मृत्यु के लिए प्रतिकर का दावा करते हुए पी.एल.ए. (स्थायी लोक अदालतों) के समक्ष आवेदन प्रस्तुत किए गए थे। ये ऐसे मामले नहीं थे जहाँ किसी लोक उपयोगी सेवा प्राप्तकर्ता को उस हैसियत में कोई चोट लगी हो। ये ऐसे मामले हैं जहाँ, संभवतः विद्युत सेवा लाइनों के रखरखाव में लापरवाही के कारण, एक व्यक्ति या मवेशी सेवा लाइन के संपर्क में आया और विद्युत के झटके से मर गया। इसलिए, इन मामलों में प्रतिकर का दावा अपकृत्य दायित्व पर आधारित है और इसे लोक उपयोगी सेवाओं *से संबंधित, या उसके संदर्भ में, या उससे संबद्ध है*, विवाद नहीं कहा जा सकता। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत किए गए मामलों में भी, लोक अदालतों के क्षेत्राधिकार की प्रकृति और सीमा के संबंध में समान दृष्टिकोण अपनाया गया है, यद्यपि वे कुछ भिन्न स्थिति में और अन्य सेवा से संबंधित थे।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

उत्तरदाताओं के विद्वान अधिवक्ता ने केरल उच्च न्यायालय द्वारा अपने निर्णय **सभारत्नम उर्फ सभा रथीनम** (पूर्वोक्त) के कंडिका-8 में और झारखंड उच्च न्यायालय के निर्णय **विजय कुमार शर्मा** (पूर्वोक्त) के मामले में दिए गए अवलोकनों का अवलंब लिया। **सभारत्नम उर्फ सभा रथीनम** (पूर्वोक्त) के मामले में, केरल उच्च न्यायालय ने अंततः यह निष्कर्ष किया:

> "12.उपरोक्त चर्चा मुझे इस निष्कर्ष पर पहुँचाती है कि एक स्थायी लोक अदालत के पास मोटर दुर्घटना से उत्पन्न होने वाली किसी दावे याचिका पर निर्णय करने का क्षेत्राधिकार नहीं होगा। चूंकि सांविधिक स्थिति वर्तमान में यह है कि केवल मोटर वाहन अधिनियम के अंतर्गत गठित न्यायाधिकरणों के पास ही ऐसे मामलों पर निर्णय

करने का क्षेत्राधिकार है। स्थायी लोक अदालत के पास प्रदर्श पी-1 परिवाद पर विचार करने या प्रदर्श पी-3 आदेश पारित करने का कोई क्षेत्राधिकार नहीं था।"

पूर्वोक्त निष्कर्ष अधिनियम के अध्याय VI-ए में निहित प्रावधानों की सांविधिक योजना, जो धारा-22बी के तहत पी.एल.ए. की स्थापना से संबंधित है, और धारा 22ए(बी)(vi) में परिभाषित बीमा सेवा से संबंधित लोक उपयोगी सेवा के अर्थ की जाँच करने के बाद निकाला गया था। उस मामले में निष्कर्ष निम्नलिखित अनुसार अवलोकन करते हुए निकाला गया था:

"10....यदि न्यायालय यह पाता है कि दुर्घटना वाहन के चालक की लापरवाही के कारण हुई है, तो दावाकर्ता प्रतिकर का हकदार है। लेकिन यह उस पक्ष पर एक न्यायालय द्वारा न्यायनिर्णयन का विषय है जिसमें अनिवार्य रूप से एक अपकृत्यकर्ता के विरुद्ध आहत व्यक्ति द्वारा किया गया दावा शामिल है, और मेरी राय में, यह विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम की धारा 22ए(बी)(vi) में आने वाले पद "बीमा सेवा" के अंतर्गत समाहित नहीं है। दूसरे शब्दों में, मोटर दुर्घटना में आहत व्यक्ति द्वारा प्रस्तुत की गई दावा याचिका से उत्पन्न होने वाला विवाद विधिक सेवा प्राधिकरण अधिनियम के अध्याय VI-ए के प्रयोजन के लिए "बीमा सेवा से संबंधित" विवाद नहीं है।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

इसलिए, पूर्वोक्त निर्णय उत्तरदातागण के लिए सहायक नहीं है, बल्कि यह केवल उस दृष्टिकोण का समर्थन करता है जो इस न्यायालय द्वारा लिया गया है।

22. झारखंड उच्च न्यायालय के **विजय कुमार शर्मा** (पूर्वोक्त) के मामले में, यह निर्णित किया गया था कि बीमा कंपनी तृतीय पक्ष दावे के लिए भुगतान करने की अपनी देनदारी से यह कहकर बच नहीं सकती कि बीमा सेवा में तृतीय पक्ष दावा शामिल नहीं होगा, क्योंकि ऐसा दावा ऐसी सेवा/पॉलिसी का हिस्सा है। इसलिए, यह निर्णय वर्तमान मामले के तथ्यों पर स्पष्ट रूप से भिन्न है।

23. परिणामस्वरूप, यह अभिनिर्धारित करना होगा कि स्थायी लोक अदालतों द्वारा रिट याचिका (227) क्र. 6728/08 में पारित दिनांक 27 अगस्त, 2008 का आदेश और रिट याचिका (227) क्रमांक 5470/08 में पारित दिनांक 14 जुलाई, 2008 का आदेश, विधि के अंतर्गत उन्हें प्राप्त क्षेत्राधिकार और प्राधिकार से स्पष्ट रूप से अधिक हैं। तदनुसार, रिट याचिकाएँ स्वीकार की जाती हैं और दोनों मामलों में स्थायी लोक अदालतों द्वारा पारित उपरोक्त संदर्भित आदेश एतद् द्वारा अपास्त किए जाते हैं।

24. दावाकर्ता निश्चित रूप से, विधि के अंतर्गत उन्हें उपलब्ध प्रतिकर के लिए उचित उपचार का सहारा लेने के लिए स्वतंत्र होंगे।

25. इस आदेश की एक प्रति संबंधित रिट याचिका [रिट याचिका (227) क्रमांक 5470/08] के अभिलेख में रखी जाए।

26. पक्षकार अपने-अपने व्यय स्वयं वहन करेंगे।

हस्ताक्षर

श्री मनीन्द्र मोहन श्रीवास्तव

न्यायमूर्ति

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

अस्वीकरणः हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु **निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।**

Translated By Vartika Verma